

T.T.D. Religious Publications Series No. 1109

Price :

Published by **Sri M.G. Gopal**, I.A.S., Executive Officer,
T.T.Devasthanams, Tirupati and Printed at T.T.D. Press, Tirupati.

श्रीनिवास बालभारती

राजा जनक

हिन्दी अनुवाद

डॉ. सी. बालसुब्रह्मण्यम्



तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्रीनिवास बालभारती - 161

राजा जनक

तेलुगु मूल
श्री उपद्रष्ट वेंकटरामय्या

हिन्दी अनुवाद
डॉ. सी. बालसुब्रह्मण्यम्



तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

2014

Srinivasa Bala Bharati - 161
(*Children Series*)

RAJA JANAK

Telugu Version

Sri Upadrashta Venkataramaiah

Hindi Translation

Dr. C. Balasubrahmanyam

Editor-in-Chief

Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No. 1109

©All Rights Reserved

First Edition - 2014

Copies : 5000

Price :

Published by

M.G. Gopal, I.A.S.,

Executive Officer,

Tirumala Tirupati Devasthanams,

Tirupati.

D.T.P.:

Office of the Editor-in-Chief

T.T.D, Tirupati.

Printed at :

Tirumala Tirupati Devasthanams Press,

Tirupati.

दो शब्द

बच्चों का हृदय सुमनों की भांति निर्मल होता है। उत्तम कपूर से बढ़कर सुवासित उन के दिलों में बढ़िया संस्कार पैदा करना है। यदि उन में हम अच्छे संस्कार डालते हैं तो चिरकाल तक आदर्श जीवन बिताने के लिए सुस्थिर नींव पड जाती है। बचपन में संस्कार प्राप्त बच्चे भावी पीढ़ियों के लिए समुचित मार्ग दर्शन कर सकते हैं। इसलिए हमारे इन होनहार बच्चों के लिए हमारी विरासत बने पौराणिक मूल्यों तथा इतिहास में निहित मानवता के मूल्यों का परिचय कराना अत्यंत आवश्यक है।

बिना लक्ष्य का जीवन निष्फल होता है। बच्चों को लक्ष्य की ओर प्रेरित कर उनके जीवन को सही मार्ग पर ले जाने की जिम्मेदारी बड़ों के ऊपर है। महान व्यक्तियों की आदर्शमय जीवनियों का परिचय करा कर उनमें प्रेरणा जगाने के उद्देश्य से 'श्रीनिवास बालभारती' का शुभारंभ किया गया है।

इस योजना का मुख्य लक्ष्य नैतिक मूल्यों के माधुर्य के बच्चों तथा सर्वत्र फैलाने का है। हमें यह जानकर अत्यंत आनंद हो रहा है कि बच्चे तथा परिवार के सभी लोग इन पुस्तकों का स्वागत कर रहे हैं। इससे तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् का मुख्य उद्देश्य कुछ हद तक सफल हो रहा है।

'श्रीनिवास बालभारती' की योजना तैयार करके उत्तम पुस्तकों का प्रकाशन करवा कर कम कीमत पर सब को उपलब्ध कराने का प्रयास, करनेवाले प्रो.एस.बी. रघुनाथाचार्य अभिनंदनीय हैं।

इस प्रकाशन में सहयोग देनेवाले लेखकों तथा कलाकारों के प्रति मैं अपना धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

U.H. S. S. S.
कार्यकारी अधिकारी

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

प्राक्कथन

आज के बच्चे कल के नागरिक हैं। अगर वे बचपन में ही महोन्नत सञ्जनों की जीवनियों के बारे में जानकारी लें, तो अपने भावी जीवन को उदात्त धरातल पर उज्ज्वल रूप से जीने के मौके को प्राप्त कर सकते हैं। उन महोन्नत सञ्जनों के जीवन में घटित अनुभवों से हमारी भारतीय संस्कृति, जीवन में आचरणीय मूल धार्मिक सिद्धान्तों तथा नैतिक मूल्यों आदि को वे निश्चय ही सीख सकते हैं। आज की पाठशालाओं में इन विषयों को सिखाने की संभावना नहीं है।

उपरोक्त विषयों को ध्यान में रखकर तिरुमल तिरुपति देवस्थान के प्रचुरण विभाग ने डॉ. एस.बी. रघुनाथाचार्य के संपादन में स्थापित “बाल भारती सीरीस” के अन्तर्गत विविध लेखकों के द्वारा तेलुगु में रचित ऋषि-मुनियों व महोन्नत सञ्जनों की जीवनियों से संबंधित लगभग 900 पुस्तिकाओं का प्रकाशन किया। इनका पाठकों ने समादर किया और इसी प्रोत्साहन से प्रेरित होकर अन्य भाषाओं में भी इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया। प्रारम्भिक तौर पर इनको अंग्रेजी व हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया जा रहा है। इनके द्वारा बच्चे व जिज्ञासु पाठकों को अवश्य ही लाभ पहुँचेगा।

इन पुस्तिकाओं के प्रकाशन करने का उद्देश्य यही है कि बच्चे पढ़ें और बड़े लोग इनका अध्ययन कर, कहानियों के रूप में इनका वर्णन करें, तद्वारा बच्चों में सृजनात्मक शक्ति को बढा दें। फलस्वरूप बच्चों को अच्छे मार्ग पर चलने की प्रेरणा निश्चय ही बचपन में ही मिलेगी।

आर. श्रीहरि

एडिटर-इन-चीफ
ति.ति.देवस्थानम्

स्वागत

**श्रीनिवासदयोद्भूता बालानां स्फूर्तिदायिनी।
भारती जयताल्लोके भारतीयगुणोज्ज्वला॥**

जब खण्डान्तरों में सभ्यता की बू तक नहीं थी तब भरतवर्ष अपनी सभ्यता, संस्कार, धर्म, नैतिकाचरण के लिए प्रसिद्ध हो गया था। जो इस पुण्य-भूमि पर जन्मता है वह धर्माचरण में स्थिर होकर अधर्म का सामना करता है और क्रमशः ईश्वराभिमुखी होकर यशोवान होता है। ऐसे महात्माओं के प्रभाव से हमारे जीवन इह-पर दोनों प्रकार लाभान्वित होते हैं। उनके आदर्शमय जीवनों से स्फूर्ति पाता है और समझता है कि मैं इस महान भारत का वारिस हूँ; परंपरागत इस संप्रदाय की रक्ष करना मेरा कर्तव्य है। ऐसी भावना से वह अपने देश की सेवा के लिए तैयार रहता है।

वास्तव में इस देश में कई धर्मात्मा, वीरपुरुष, वीरनारियाँ पैदा हुईं उन्होंने संस्कृति की टूट नीवं डाली है। हमारा भाग्य यही है कि हमारी पैतृक-संपदा के रूप में उज्वल इतिहास की परंपरा है। उनके आदर्शों के पालन करने से ही कोई विद्यावान-विज्ञानी बन सकता है। राष्ट्र के जीवन प्रवाह में वही विज्ञान अचल रहकर जीवन को सुशोभित करता रहता है। इसी सिलासले को आगे बढाने के लिए महात्माओं के जीवनो को संक्षिप्त रूप में आपके सामने रखता हूँ।

हे भारत के भाग्यदाता बालक-आइए-स्फूर्ति पाइए

एस.बी. रघुनाथाचार्य

प्रधान संपादक

परिचय

वह एक राज - दरबार है, जिस देश के सम्राट सिंहासन पर विराजमान हैं। वह सभा असंख्य आध्यात्मिक ज्ञान संपन्न महान व्यक्तियों से भरपूर है। सब के सब अपने अपने उचित आसनों पर बैठे हैं। वहाँ आत्मतत्वादि विषयों की चर्चा चल रही है। महाराज श्रद्धा - भक्ति से उन सब के विचार सुन रहे हैं। इतने में कोई चिल्लाते खबर देता है कि यह महानगर आग में जल रहा है। तब तक अपने विचार बढा चढा कर वादोपवाद करनेवाले सज्जन किसी को बताये बिना अपनी संपत्ति की रक्षा करने तुरन्त दौड पडे। परन्तु अचरज की बात तो यह है कि उस नगर का राजा आराम से सिंहासन पर बैठे रहे। उनके मुँह पर लेशमात्र भी उदासीनता दिखाई नहीं दी, उनके गुरु के प्रश्न करने पर वे तुरन्त चैन से उत्तर देते हैं कि उसमें मेरा कुछ भी नहीं है। इस पर मेरी चिंता करने की क्या आवश्यकता है? शायद आप उस महान व्यक्ति को पहचान लिये होंगे। वे अन्य कोई नहीं राजा जनक ही हैं। ये विराग के प्रतिरूप हैं।

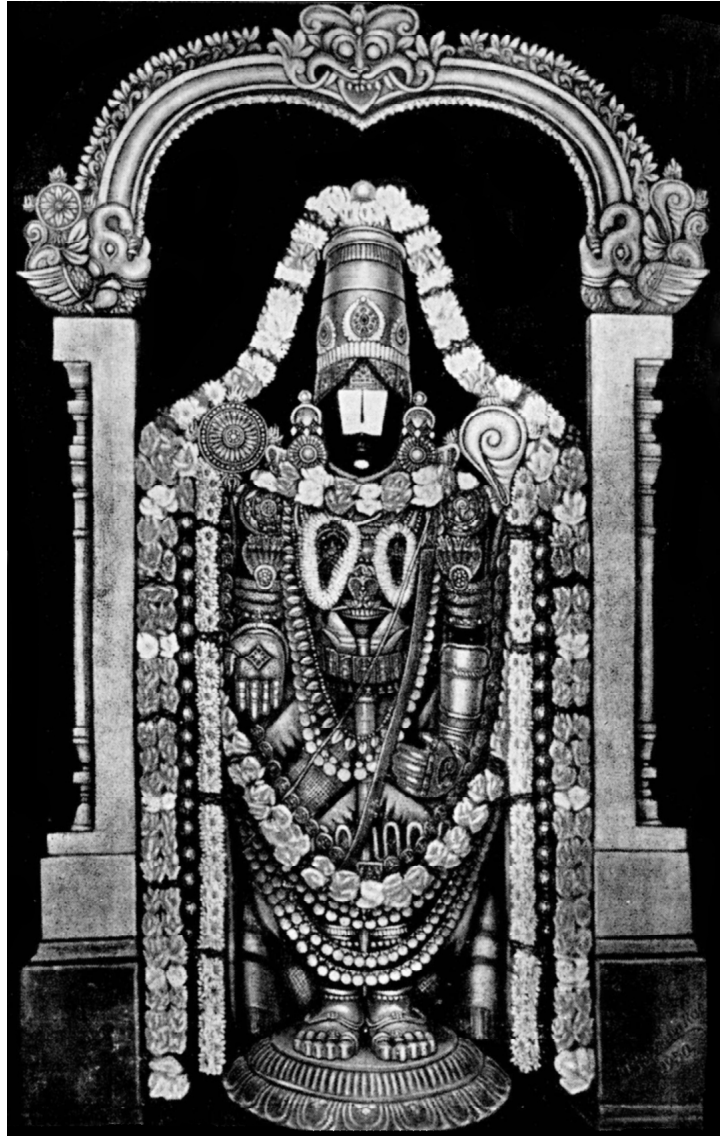
उस वंश में जितने भी जनक पैदा हुए उन में राजा सीरध्वज ही जनक नाम से प्रख्यात हुए। जगत जननी तथा भूजाता सीतादेवी इनकी लाडली बेटी है। धर्मनिरत एवं मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी ही उनके जामाता हैं।

जनक सम्राट होने पर भी संग रहित होकर ही राज्य का पालन करते रहे। ये सदा निष्काम कर्म योग तथा कर्तव्य परायणता से अपना जीवन बितानेवाले कर्मयोगी है। ये मिथिलापति कर्तव्य निष्ठा के अंकित अवनीनाथ हैं।

ये विदेशाधिपति सुलभ नाम की योगिनी की परीक्षा में सफलता पाकर, उसे डांटकर उसके द्वारा ही 'तुम मुक्त संग हो' जैसी दुर्लभ प्रशंसा पाये हुए 'पंच शिखरामार्य' के प्रियशिष्य हैं।

राजा जनक में निहित कर्म - निष्ठा, संग - राहित्य आज के समाज को स्फूर्ति बननी चाहिए।

- प्रधान सम्पादक





राजा जनक

मेरा कोई न जल रहा है

हमारा भारत देश अनादि काल से धन - दौलत से समृद्ध है। यहीं पर बहुत से राजाओं ने धर्म निरत होकर राज्य का पालन किया। वे अपनी प्रजा का सुख ही अपना सुख मानकर उनको अपनी निजी संतान की तरह देखते रहे। राजा कितना भी जागरुक से पालन करे, तो लोगों में कोई न कोई दोष दिखायी पडता था। राजा उसे स्वयं वहन करता था। आर्योक्ति है - 'राज्यांते नरकं ध्रुवम्'! राजा के राज्य का पालन करने के पश्चात् अवश्य नरक प्राप्त करते हैं। राजा कितना भी न्याय सहित पालन करने पर भी उसे अवश्य यह बाधा प्राप्त होती है। लेकिन राजा जनक को यह समस्या उत्पन्न नहीं हुई। उनको अंत में मोक्ष साम्राज्य ही प्राप्त हुआ, क्योंकि वे राजर्षि है, राज्य का पालन करते समय भी वे सर्वसंग परित्यागी की भांति ऋषि की तरह साधारण जीवन बिताते रहे।

**अनंतम् बतमे वित्तम्, भस्म मे नास्ति किंचन
मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे किञ्चित् प्रदह्यते ॥**

..... मेरे पास अनंत धन राशि है। लेकिन उस में मेरा लेश मात्र भी नहीं है। मिथिला के जल जाने पर भी मेरा कुछ भी नहीं जल जाता। यह राजा जनक का कथन है।

राजा जनक महान है। वे कमलदल के ऊपर की बूँद की तरह सांसारिक बंधनों में फंसने के सिवा आत्मज्ञान से परिपूर्ण होकर राज - काज चलाते रहे। उनमें अहं एवं ममकार की भावनाएँ लेशमात्र भी नहीं

है। उनके शासन में प्रजा सुख - जीवन बिताते रहे। उनके यहां सदा बहुत से आत्मज्ञानी उपस्थित होकर वेदांतादि विषयों की चर्चा करते रहते थे। इतिहास इसका साक्षी है।

सीरध्वज ही राजा जनक है

पूर्वकाल में 'निमि' नामक राजा रहते थे। उनके पुत्र का नाम 'मिथि' था। 'मिथि' के द्वारा निर्माण कराने से नगर का नाम 'मिथिला नगर' पडा। उनके वंश में देवराज और कीर्तिराज नाम के प्रसिद्ध राजा भी हुए थे। इसी वंश में 'हस्वरोम' नाम के और एक राजा था। इनके दो पुत्र थे। वे हैं - सीरध्वज और कुशध्वज। मिथिला नगर के निर्माण के उपरांत 'मिथि' ही उस नगर का पहला 'जनक' था। जनक नाम उस वंश के लिए कायम हो गया। इस वंश में अनेक जनक हुए। लेकिन सीरध्वज ही 'जनक' नाम से प्रसिद्धि पायी। सीरध्वज के लिए 'जनक' नाम मशहूर हो गया।

पलक का पर्यायवाची शब्द है 'निमि'

'निमि' के संबंध में एक कहानी प्रचलित है। सूर्य वंश का राजा इक्ष्वाकु के पुत्र का नाम है - निमि, ये एक सम्राट हैं। इन्होंने एक याग करने का संकल्प किया। वशिष्ठ को 'होता' के रूप में नियुक्त करने के संकल्प से उनको बुलाया। लेकिन वशिष्ठ पहले ही निश्चित इन्द्र के यज्ञ को पूरा करने के विचार से बाद में आने का समाचार भेजा। लेकिन निमि ने देरी होने की वजह से गौतम को 'होता' के रूप में नियुक्त करके याग पूरा किया। इतने में इन्द्र का याग पूरा करके वशिष्ठ वहाँ आते हैं। अपने को निमंत्रण देकर बिना सूचना के अन्य के साथ यज्ञ संपन्न करने से वशिष्ठ क्रोधित होकर निमि को शाप देते हैं कि विदेह बन जाओ। देवगण

निमि को जलाने का प्रयत्न करते हैं तो निमि इनकार कर देते हैं। क्यों कि पुनः शरीर धारण करना उनको पसंद नहीं है। देवताओं के अनुग्रह से देह रहित लोगों के पलकों पर खड़े होते हैं। तब से निमि पलक का पर्यायवाची शब्द बना। 'निमि' विदेह के होने से जिस राज्य का वे पालन करते थे, उस देश का नाम विदेह पडा और राजाओं को विदेही कहलाये। इन राजाओं में 'सीरध्वज' ही प्रसिद्ध हैं।

हल की रेखा में

एक बार राजा सीरध्वज ने संतान प्राप्त करने याग करना चाहा। प्राचीनकाल में खेती - बारी के लिए उस राज्य का राजा पहली बार खेती जोतने के पश्चात् किसान कृषि के लिए खेत जोतने की परंपरा थी। आज भी यही परंपरा कई जगह चल रही है। इस परंपरा के अनुसार राजा सीरध्वज सोने के हल से याग - भूमि को जोतने लगे। राजा के भूमि



जोतते समय हल की नोक एक पेटी से लटका। पेटी को बाहर निकाल कर उसे खोलने पर उसमें एक सुन्दर - कोमल नवजात शिशु दिखायी पडी। राजा निस्संतान होने के नाते उस शिशु को भगवान का वरदान मानकर उसे अपनी पट्टरानी 'रत्नमाला' को दिया। हल की रेखा में प्राप्त होने से उस शिशु का नाम 'सीता' रखा गया। सीता माने हल की रेखा है। सीरध्वज उस बच्ची को लाड प्यार से लालन पालन करने लगे।

वेदवती ही सीता है

सीता पहले जन्म में 'वेदवती' के रूप में अवतरित हुई। कुशध्वज इसका पिता था। वेदाध्ययन करते समय इसका आविर्भाव होने से इसका नाम 'वेदवती' रखा गया। कहा जाता है कि वेदवती की पैदाइश के समय प्रसवगृह में वेदध्वनि सुनाई पडी। राजा कुशध्वज कहा करते थे कि मेरी पुत्री का विवाह भगवान विष्णु से ही संपन्न करूँगा। एक बार एक राक्षस ने कुशध्वज से वेदवती का विवाह उसके साथ कराने को कहा। राजा कुशध्वज के अस्वीकार करने पर राक्षस ने उसे मार डाला। राजा कुशध्वज की मृत्यु के पश्चात् उसी दुःख में उसकी पत्नी भी मर जाती है। माता - पिता की मृत्यु से वेदवती अकेली रह जाती है। वेदवती तपस्विनी होकर तप करती रहती है। एक बार रावण वेदवती को देखकर उसकी सुन्दरता पर आकर्षित हो जाता है। उससे विवाह करना चाहता है। वेदवती अपना निश्चय यों बताती है कि मैं भगवान विष्णु के सिवा अन्य किसी का वरण न करूँगी। जब रावण उस पर जबर्दस्ती करने लगा, तब वह यो कहती है - "मैं अगले जन्म में अयोनिज के रूप में जन्म लेकर तुम्हारे वंश का नाश करूँगी।" इसके पश्चात् वह योगाग्नि में गिरकर अपना शरीर त्याग करती है। बाद में वेदवती का आविर्भाव

लंका में अयोनिज के रूप में एक कमल में होता है। वह पहले पहल रावण को ही दिखाई पड़ती है। इस घटना पर ज्योतिषी रावण से बताते हैं कि इससे लंका नगर को अनिष्ट पहुँचेगा। इस पर रावण उस शिशु को एक पेटी में रखकर उसे बंद करके समुद्र में फेंक देता है। वह पेटी बहती हुई मिथिला नगर के जमीन में गड जाती है। राजा सीरध्वज के खेत जोतने पर वह पेटी उसे मिलती है। राजा उस शिशु को हल की रेखा में प्राप्त होने से 'सीता' का नाम रखकर लाड प्यास से उसका पोषण करते हैं।

शुक्ल पक्ष चन्द्र की तरह

राजा जनक के घर में सीता शुक्ल पक्ष चन्द्रमा की तरह दिन ब दिन वर्धमान होती हुई बढ रही है। राजदंपती इसको लाड प्यार से लालन पालन करते हैं। सीता के सौन्दर्य को देख मुग्ध होते हुए उसकी बाल क्रीडाएँ देख आनंद विभोर होते हैं। एक बार सांकाश्य नरेश सुधन्व ने सीता को शिव धनु सहित अपने को सौंपने का दबाव देता है। उस पर राजा जनक उससे स्पष्ट रूप से कह देते हैं कि सीता वीर शुल्क है। कोई भी वीरता से उसे प्राप्त कर सकते। इसलिए मैं सीता को नहीं दे सकता। इस पर सुधन्व नाराज होकर राजा जनक के राज्य पर हमला करता है। युद्ध में उसकी मृत्यु हो जाती है। राजा जनक सांकाश्य राज्य अपने भाई कुशध्वज को सौंप देते हैं।

जो शिव धनु की डोरी चढाते, उनको ही...

राजा जनक के घर में परंपरा से एक शिवधनु था। पूर्व काल में राजा दक्ष याग करते हुए भी अपने दामाद शिव पर नाराज होकर उनको

निमंत्रण नहीं भेजते। शिव की पत्नी सतीदेवी बगैर निमंत्रण पिता के यज्ञ में हाजिर होती है। राजा दक्ष अपनी पुत्री के सामने ही शिव की निंदा करते हुए उसका अपमान करते हैं। पति की निंदा न सहनेवाली सतीदेवी यथाशीघ्र यज्ञ - कुण्ड में कूद कर जल जाती है। विषय मालूम होते ही शिव आग बबूला होकर अपने धनुष के साथ जाकर दक्ष के याग को ध्वंस कर देते हैं। अपनी बुलाव के बिना जो देवगण अभीष्टता से वहाँ आते हैं शिव उन सब को अपने धनु से मार डालते हैं। देवता लोग शिव के शरण में आते हैं तो शिव उन पर कृपा कर धनु उनको सौंप कर तप करने चले जाते हैं। देवगण उस धनुष को निमि वंश के श्रेष्ठ तथा धर्मात्मा सम्राट देवराट के यहाँ सुरक्षित रखते हैं। तब से इस शिवधनु को निमि वंश के राजा श्रद्धापूर्वक पूजा करते सुरक्षित रखते हैं। उस धनु को कोई उठाना या डोरी चढाना न कर सके। इस तरह शिव धनु राजा जनक के घर में स्थायी रूप से है। सीतादेवी के तेज को भली - भाँति समझनेवाले राजा जनक निश्चय कर लेते हैं कि जो वीरपुरुष शिव धनु की डोरी चढायेगा उसके साथ ही अपनी पुत्री सीता का विवाह संपन्न होगा।

अपनी प्रतिज्ञा बनाये रखना

सीता से विवाह कर लेने की आशा से उसके पूर्व अनेक राजा आकर धनु की डोरी चढाने का प्रयत्न करते हैं। लेकिन कोई भी उसमें सफलता नहीं पाते। डोरी चढाने की बात अलग है, पर उसे कोई हिला न सके। वे सब निराशा से राजा जनक के निर्णय को बदल लेने की सलाह देते हैं पर जनक उनकी प्रार्थना को टाल देते हैं और अपने निर्णय

पर अडिग रहते हैं। इस पर सभी राजा जनक पर हमला करते हैं। राजा जनक एक साल तक उनसे युद्ध करते करते कमजोर बन जाते हैं। शक्ति प्राप्त करने हेतु तप करने लगते हैं तो देवता लोग उन पर प्रसन्न होकर चतुरंग बल प्रदान करते हैं। उनकी सहायता से राजा जनक शत्रु राजाओं को पराजित करते हैं। इस तरह जनक अपनी प्रतिज्ञा निभा सकते हैं।

मिथिला नगर में राम - लक्ष्मण

राजा जनक याग करने उद्यत होते हैं। उस यज्ञ के अंत में शिव धनुष भंग करनेवाले के साथ अपनी पुत्री सीता का विवाह करने का



निश्चय कर लेते हैं। याग को देखने की इच्छा से कुछ तथा यज्ञ में भाग लेने कुछ राजा मिथिला नगर पहुँचते हैं। राम - लक्ष्मण ताटकादि राक्षसों का संहार कर विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करते हैं। इसके पश्चात् वे विश्वामित्र के साथ

मिथिला नगर को प्रस्थान होते हैं। मार्ग में श्रीराम अहल्या का शापमोचन करते हैं। विश्वामित्र राम - लक्ष्मण सहित मिथिला नगर पहुँचते हैं। वे

मिथिला की शोभा देखकर मुग्ध होते हैं और वहाँ के लोगों की धर्म परायणता का भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं। राजा जनक विश्वामित्र का स्वागत सत्कार कर अर्घ्यपाद्यादि से उनका आदर करते हैं। उनको ठहरने की उचित व्यवस्था करते हैं।

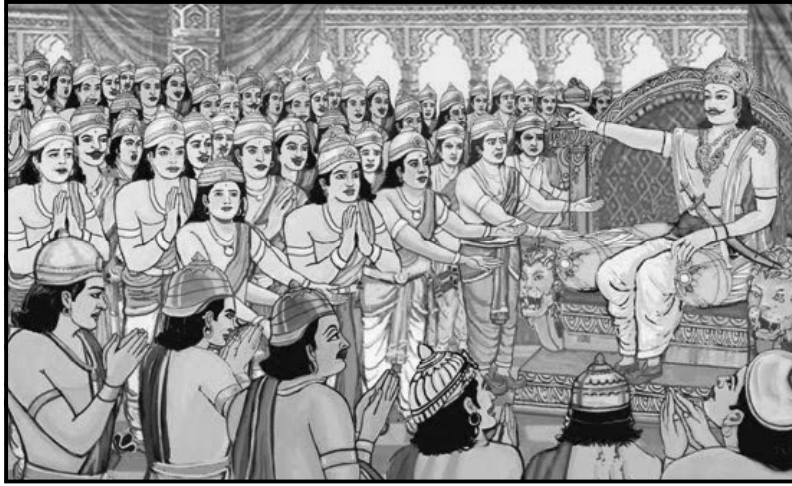
सीता वीरशुल्का

राजा जनक विश्वामित्र के द्वारा राम - लक्ष्मण का वृत्तांत जानकर प्रसन्न होते हैं। शतानंद राजा जनक के पुरोहित हैं और अहल्या उनकी माता है। वे राम के द्वारा अपनी माता का शापमोचन होने की बात सुनकर बहुत खुश होते हैं और राम की प्रशंसा करते हैं। राजा जनक विश्वामित्र से निवेदन करते हैं कि हे महर्षि! मेरी पुत्री सीता अयोनिजा है, साथ ही साथ वीर शुल्का भी। उसके विवाह के संदर्भ में पराक्रम को ही शुल्क के रूप में निर्णय किया गया है। यहाँ जो शिवधनु रखा गया है, वह हमें अपने पूर्वजों से प्राप्त है। परंपरा से इसकी पूजा संपन्न हो रही है। जो वीर पुरुष इस धनुष की डोरी चढायेगा, उसको मेरी पुत्री सीता वरण करेगी, आज तक कई राजाओं ने इसे उठाने का प्रयत्न किया, किन्तु कोई इसमें सफलता न पायी।”

महान वीर एक भी नहीं?

दूसरे दिन सभा का प्रबंध हुआ। शिव - धनुष भी वही पर लाया गया। राजा जनक की अनुमति से ऐलान किया गया कि जो वीर पुरुष धनु की डोरी चढायेगा, सीता उसका वरण करेगी। राजा लोग एक एक आकर अपने बल का प्रदर्शन करने लगे। लेकिन कोई भी उसमें सफलता नहीं पा सके। सभी राजा निराशा से लौट जाते हैं। यह सब

देखकर राजा जनक चिंतित होते हैं। वे उदासीनता से बोलते हैं - “क्या इस भरी सभा में धनु की डोरी चढ़ाने योग्य वीर एक भी नहीं? क्या यह पृथ्वी वीरों से निष्फल हो गयी है? मेरी पुत्री सीता का विवाह होने का अवकाश ही नहीं है क्या?” वहाँ उपस्थित राजा सब के सब शर्म से अपने सिर झुका लेते हैं। सब को सीता की दीन दशा पर दया आती है।



जानकी ने जयमाला डाली

राजा जनक की सभा की परिस्थिति पर ध्यान देकर विश्वामित्र श्रीराम की ओर देखते हैं तथा उसे भी प्रयत्न करने का आदेश देते हैं। श्रीराम अपने गुरु विश्वामित्र की आज्ञा पाकर वहाँ उपस्थित गुरुजनों तथा सभा को प्रणाम करके शिव - धनु के पास जाते हैं। धनुष को आसानी से उठाकर डोरी लगाने के प्रयत्न करने पर धनु ध्वनि के साथ टूट जाता है। धनु की ध्वनि सुनकर राम - लक्ष्मण, विश्वामित्र, जनक एवं सीता के सिवा सब के सब मूर्छित होते हैं। कुछ समय के उपरांत वे



होश में आकर लज्जा से सिर झुका लेते हैं। अंबर से राम के सिर पर फूलों की वर्षा होती है। देवदुन्दुभियां बजती हैं। राजा जनक अत्यंत प्रसन्न हो जाते हैं। सभा में उपस्थित सभी लोग आनंद विभोर हो जाते हैं कि सीता के लिए तेजःसंपन्न पति मिले। सीता श्रीराम के गले में जयमाला पहनाती है।



मिथिला की विजय

विश्वामित्र से राजा जनक विनम्रता से बोले - “महात्मान्! श्रीराम का पराक्रम जाहिर हुआ। मैं ने कभी भी स्वप्न में भी नहीं सोचा कि ऐसा अद्भुत कार्य संपन्न होगा। मेरी प्रतिज्ञा पूरी हुई। इतना तेजोबल पराक्रम संपन्न व्यक्ति दामाद बनना मेरा सौभाग्य ही है। मैं अपने प्राणों से प्रिय मेरी पुत्री सीता को राम को सौंपने तैयार हूँ। यदि आपकी आज्ञा हो तो राम के पिता दशरथ को यह खुशखबरी भेज कर उनको यहाँ ले आने मैं अपने मंत्रिगण को अयोध्या भेजूँ।”

विश्वामित्र राजा जनक की विनती मान लेते हैं। उनकी धर्म तत्परता की प्रशंसा करते हैं। राजा जनक यथाशीघ्र अपने मंत्रियों को सपरिवार अयोध्या भेजते हैं।

राजा जनक अपने मंत्रियों के द्वारा दशरथ महाराज को समाचार भेजते हैं कि दशरथजी! आपको विदित ही है कि मेरी पुत्री सीता के विवाह के अवसर पर मैं वीरशुल्क निश्चित करना तथा उसमें अनेक राजा हार जाना। विश्वामित्र के साथ राम - लक्ष्मण संयोगवश यहाँ आये। श्रीराम ने आसानी से शिव धनु की डोरी चढा दी। वह टूट गया। मैं अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार अपनी पुत्री सीता का विवाह श्रीराम के साथ संपन्न करना चाहता हूँ। इसके लिए आप की अनुमति चाहता हूँ। मेरी प्रार्थना स्वीकार कर आप अपने परिवार के साथ यहाँ हाजिर होकर यह शुभकार्य निर्विघ्न रूप से पूरा करो।”



राजा जनक के मंत्री दशरथ महाराज के पास पहुँच कर सारा वृत्तांत बताते हैं। उनसे जनक का संदेश निवेदन करते हैं। दशरथ सारा विषय जानकर आनंद विभोर हो जाते हैं। यह खबर वशिष्ठ, वामदेवादि ऋषियों को भी सुनाते हैं। ये सब राजा जनक के विनय, सौशील्य एवं समय स्फूर्ति की भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं। राजा दशरथ तुरंत अपने परिवार के साथ रवाना होकर मिथिला नगर पहुँच जाते हैं।

हमारा वंश पवित्र है

राजा जनक अभ्युत्थान करके सबका स्वागत सत्कार करते हैं और उचित रीति से जनगनों का प्रबंध करते हैं। वे अपने वैभव में कमी न आने की तरह उचित रीति से सबका आदर सम्मान करते हैं।

राजा जनक दशरथ से बोलते हैं - आर्य! भगवान की कृपा से एवं आपके आगमन से मेरा जन्म धन्य हुआ है। मेरे द्वारा प्रारंभ किया गया यज्ञ निर्विघ्न रूप से समाप्त हुआ। याग के अंत में कन्यादान करना ऋषि सम्मत विषय है। आप के रघुवंश के साथ रिश्ता जोड़ने से मेरा वंश भी पवित्र बना।”

उस दिन तक जिन कार्यों को संपन्न करना है, उन सब को पूरा करके राजा जनक एवं दशरथ महाराज चैन से सुखपूर्वक रात बिताते हैं।

राजा जनक सीता को अत्यंत प्रीति से बढाते हैं। उनके छोटे भाई कुशध्वज के तीन पुत्रियाँ हैं। वे हैं - माण्डवी, उर्मिला और श्रुतिकीर्ति, जनक अपने छोटे भाई को भी बुलावा भेजते हैं। कुशध्वज सांकाश्य से मिथिला नगर पहुँचते हैं। वशिष्ठ राजा जनक को दशरथ के वंश -

इतिहास की व्याख्या करते हैं। इस तरह दोनों तरफ के राजा अपने अपने वंश इतिहास एक दूसरे को परिचय करा लेते हैं।

आप को बहुत कृतज्ञ हूँ

विश्वामित्र एवं वशिष्ठ राजा जनक से बताते हैं कि हे राजन्! इक्ष्वाकु वंश एवं निमि वंश दोनों परम पवित्र बन गये। आप के छोटे भाई की पुत्रियाँ क्रमशः उर्मिला, माण्डवी तथा श्रुतिकीर्ति दशरथ के पुत्र लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न के लिए सभी रीतियों से योग्य वधुएँ हैं। सीता के विवाह के साथ साथ इनका विवाह कराना चाहते हैं।

इन बातों को सुन कर राजा जनक अत्यंत आनंदित हो जाते हैं। वे उनसे विनम्रता के साथ बताते हैं कि हे मुनिवर! मेरा शुभ चिंतन कर इन रिश्तों को पक्का करके इन शुभ कार्यों को संपन्न करना मैं अपना पूर्व जन्म - पुण्य का फल समझता हूँ। मैं आपके प्रति सर्वदा कृतज्ञ हूँ।

इस तरह राजा जनक राम के साथ सीता का और अपने छोटे भाई की अनुमति से उनकी पुत्रियों का विवाह लक्ष्मण से उर्मिला का, भरत से माण्डवी का तथा शत्रुघ्न से श्रुतिकीर्ति का निश्चय कर लेते हैं। यज्ञ शाला में चंदनाक्षतादि पूजा द्रव्य सन्नद्ध करते हैं। विवाह मण्डप विधिवत् अलंकृत किया जाता है। दशरथ यज्ञ मण्डप में पहुँचते हैं। श्रीराम अपने भाइयों के साथ गोदानादि शुभ प्रक्रियाएँ पूरा करके यागशाला में प्रवेश पाकर अपने पिता के बगल में बैठ जाते हैं।

इयं सीता

वशिष्ठ राजा जनक से बताते हैं कि हे राजन्! दशरथजी उपस्थित होकर आप का इंतजार कर रहे हैं। इस पर राजा जनक बताते हैं - ‘‘हे

मुनिश्रेष्ठ! उनके आने जाने में कोई आह नहीं है। इस राज्य पर जितना अधिकार मेरे लिए हैं, उतना उनके लिए भी, विवाह की सभी सामग्री का प्रबंध कर अभी आ रहा हूँ। यहीं पर हमें ज्ञात होता है कि राजा जनक मैं - मेरा आदि तत्वों से अतीत हैं। परन्तु जनक सर्वाभरण भूषित होकर अपनी पुत्री सीता समेत सपरिवार विवाह मण्डप में आते हैं। मुहूर्त का समय भी निकट ही है।

**“इयं सीता मम सुता सहधर्मचरी तव
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते पाणिं गृह्णीष्य पाणिना
पतिव्रता महाभागा छायेवानुगता सदा ॥”**

कहकर राजा जनक मंत्र पूत जल राम के हाथ में दान देते हैं। अर्थात् हे राम! यह सीता मेरी पुत्री है। इस क्षण से तुम्हारी सहधर्मचारिणी है। इसका स्वीकार करें। इसका पाणिग्रहण करें। तुम को शुभ हो। यह सौभाग्यवती एवं पतिव्रता है। यह सीता सदा छाया की भांति तुम्हारा अनुसरण करती है। इसके उपरान्त जनक कन्यादान करते हैं। वहाँ उपस्थित सब लोग हर्षध्वान करते हैं। देवदुन्दुभियाँ बजती हैं। फूलों की वर्षा होती है। उसी समय लक्ष्मण के साथ उर्मिला का, भरत के साथ माण्डवी का और शत्रुघ्न के साथ श्रुतिकीर्ति का विवाह भी धूमधाम से संपन्न होता है।

इस तरह चारों भाई चारों कन्याओं के साथ पाणिग्रहण कर तीन बार अग्नि प्रदक्षिणा करने के पश्चात् वहाँ उपस्थित अपने गुरुजनों से आशीश पाकर गृहस्थ बनते हैं।

इस प्रकार राजा जनक साक्षात् लक्ष्मीजी को ही अयोनिज रूप से पुत्री के रूप में पाकर साक्षात् श्रीमहाविष्णु को दामाद के रूप में प्राप्त कर राजा जनक धन्य बने। इतना सौभाग्य कितने गृहस्थ पा सकते? दुष्ट जन शिक्षण एवं शिष्टजन रक्षणार्थ अवतरित श्रीराम याने साक्षात् भगवान विष्णु के मामा के स्थान में रहकर राजा जनक सारे जगत के लिए पूज्य बन सके।

संगरहित सम्राट

जनक राजा नहीं, सम्राट कहने योग्य हैं, ऋग्वेद में भी उल्लेख किया गया कि जो व्यक्ति राजा से बढकर ज्यादातर अधिकार पाकर अनेक राजाओं का पालन करने का सार्वभौम अधिकार रखते हैं, वही सम्राट हैं। शतपथ ब्राह्मणादि ग्रंथों में भी जनक को सम्राट के रूप में ही चर्चा की गयी है। जनक सम्राट होने पर भी सांसारिक बंधनों से परे, महान ज्ञानी एवं स्थितप्रज्ञ हैं। उनके यहाँ याज्ञवल्क्यादि शतसंख्य गुरु उपस्थित होते थे और राजा जनक को तत्वज्ञानादि गुणों का उपदेश देते थे। इनकी सभा में सदा वेदांत विषयों पर चर्चा होती रहती हैं। बहुत से ऋषि एवं मुनि यहाँ हाजिर होकर अपनी ज्ञान तृष्णा कम कर लेते हैं, राजा जनक भी अकसर इन चर्चाओं में भाग लेते रहे। पराशर, वशिष्ठ इत्यादि महर्षि धर्म, तप इत्यादि की प्रधानता के बारे में इनको उपदेश देते थे। ये माण्डव्य, शुकादि योगि पुंगवों को भी ज्ञानबोध कराते थे। मैत्रेय, गर्ग जैसे ब्रह्मवादी भी यहाँ होनेवाली संगोष्ठियों में भाग लेते रहे। उन सबकी मेधा - संपत्ति ने राजा जनक के ज्ञान को अत्यधिक तेजःसंपन्न किया।

मिथिला नगर में मेरा कुछ नहीं

एक बार राजा जनक को उनके गुरु परीक्षा करना चाहा। जनक की सभा में तत्व-ज्ञान की चर्चा हो रही थी। असंख्य मुनिगण उसमें भाग ले रहे थे। अचानक मिथिला नगर के साथ साथ ऋष्याश्रम भी जल जाने का दृश्य उनको दिखायी पडा। सब मुनि अपने अपने आश्रमों की रक्षा कर लेने के उद्देश्य से सभा में से दौड़ जाते हैं। परन्तु राजा जनक निश्चिंता से बैठे रहते हैं। गुरु के पूछने पर वे प्रसन्न वदन से जवाब देते हैं कि वहाँ जितनी भी धन राशियाँ हो, उनमें मेरा कुछ भी नहीं है। यदि मिथिला नगर जल जाने पर भी वहाँ नाश हो जानेवाला मेरा कुछ भी नहीं है। राजा जनक की स्थितप्रज्ञा देख उनके गुरु आश्चर्यचकित होकर उनकी ज्ञान निष्ठा की प्रशंसा करते हैं।

क्या कर्तव्य त्यागने से मोक्ष प्राप्त होता?

एक बार राजा जनक विरक्ति भावना से राज काज छोडकर भिक्षाटन से अपना जीवन यापन करना चाहते हैं। तब उनकी पत्नी कहती है - “हे नाथ! गृहस्थ होकर बहुत से लोग जीवन यापन कर रहे हैं। दाता का हाथ ही सदा ऊपर रहता है, न कि भिखमंगा का। इतना ही नहीं अनेक महात्मा आप के सहारे ही जीवन बिता रहे हैं। क्या उन सबको तंग कर अकर्मण्य बनकर कर्तव्य छोडने से मोक्ष प्राप्त होता? जनक अपनी पत्नी की बातों से प्रभावित होकर अपना कर्तव्य निभाते हुए जीवन्मुख होने का प्रयत्न करते हैं।”

ये रिश्ते अशाश्वत हैं

राजा जनक एक बार बंधु वियोग से चिंतित होकर राज्य त्याग कर भाग जाना चाहते हैं। अश्मक नाम के एक ऋषि देश - देशों का भ्रमण करते हुए मिथिला नगर पहुँचते हैं। वे जनक को उपदेश देते हैं कि हे राजन्! हमारे हाथों में कुछ भी नहीं है। सब के सब समय के अधीन में हैं। रिश्तेदारों का नाता भी नदी में बह जानेवाली लकड़ियों के जैसे अशाश्वत है। इसलिए तुम राज्य त्यागने का विचार छोड़कर अपना कर्तव्य निभाओ। मुनि की बातों से प्रभावित होकर राजा जनक कर्तव्योन्मुख होते हैं।

राजा जनक को सदा शताधिक आचार्य उपदेश देते रहते हैं। जनक उन उपदेशों का ज्यों का त्यों मनन किया करते हैं। वे भी स्वयं चर्चाओं में भाग लेकर अपना निर्णय बताकर सबको संतुष्ट करते हैं। एक बार पंचशिख नाम के एक ऋषि देशाटन करते हुए मिथिला नगर पहुँचते हैं। वे बड़े दार्शनिक एवं ज्ञानी हैं। वे राजा जनक के दरबार के शताधिक आचार्यों को वाद विवाद में हरा देते हैं। राजा जनक की प्रार्थना पर उनको तत्वोपदेश करते हैं।

कर्म करने पर भी उसमें न फंसना चाहिए

मुनि श्रेष्ठ राजा जनक को उपदेश देते हैं कि बंधु - जन एवं धन दौलत - ये सब अशाश्वत हैं। लोभ - मोहादि से अविद्या प्राप्त होती है। उनको छोड़ आत्म - ज्ञान प्राप्त करने से ही शांति मिलती है, जैसे सभी नदियाँ कहीं - कहीं बह बहकर अंत में समुद्र में विलीन हो जाती हैं वैसे

ही सत्वादिगुण आत्मा में लीन हो जाते हैं। मन को भी सुख - दुखों में प्रवेश पाने के बिना पानी में गिरा नमक कण के समान आत्मा में लीन होना चाहिए। जो कर्म करते हुए उसमें न फंस जाने पर कंचुक छोड़े साँप की तरह प्रकाशित होता है। इसी को कहते हैं वैराग्य। वैराग्य से मोक्ष प्राप्तकर लेने की संभावना है। ऋषि की बातें सुनकर राजा जनक को अत्यधिक विरक्ति भावना महसूस होती है। वे सांसारिक बंधनों में उलझ जाने के बिना अटल रह सकते हैं।

तुम सचमुच जीवन्मुक्त हो

एक दिन सुलभा नामक योगिनी राजा जनक के विराग की परीक्षा करने उनके यहाँ आती है। वह योग माया से अपने दुबला पतला शरीर को सुन्दर, कोमल एवं सुडौल रूप में बदल लेती हैं। राजा जनक उचित रीति से उसका स्वागत सत्कार कर आतिथ्य प्रदान करते हैं। योगिनी अपनी योग माया से जनक के मन में घुसकर उनमें अनेक मनोविकार जगाती हुई उनके निकट ही बैठ जाती है। राजा जनक मंदहास से हे युवती! तुम कौन हो? किसकी हो? कहाँ से आ रही हो? तुम क्या चाहती हो - इत्यादि प्रश्न करते हुए बताते हैं -

“मैं पंचशिख नाम के योगी का शिष्य हूँ। गृहस्थ होकर भी विरागी सा रहता हूँ। सोना और मिट्टी में अपने लिए कोई अंतर नहीं है, सब बराबर है। ज्ञान से ही मुक्ति मार्ग का उपदेश दिया तुझे जीवन्मुक्त समझ कर तथा तुम्हारा मन कोई मनोविकार के बिना शून्य होने के नाते तुझ में प्रवेश पाने आयी। अभी मुझे ज्ञात हुआ कि तुम भुक्त - संग न हो, मेरा जन्म एक श्रेष्ठ कुल में हुआ। मैं ने महात्माओं से ज्ञान सिद्धि पायी।

मुझे अपने लिए योग्य पुरुष न प्राप्त होने के कारण यहाँ आयी। परन्तु मुझे निराशा ही मिली।”

योगिनी की बातों को राजा जनक शांत भाव से किसी मनोविकार के बिना सुन कर चुप रहे। कुछ देर बाद योगिनी सुलभ फिर से कहने लगी -

हे राजन्! तुम मुक्त हो या न हो - इस पर विचार करना आग गरम होता है या ठंडा सोचने सा होता है। तुम मुनियों से भी पूजनीय हो। सचमुच जीवनन्मुक्त हो।

वह योगिनी उस दिन सञ्जन संगोष्ठी में समय बिता कर चली जाती है। राजा जनक मनोविकार के शिकारी बनने के संदर्भ में भी उससे बचकर बहादुर सा अटल रहते हैं। महाकवि कालिदास का कथन है - जितने भी विकार के हेतु उत्पन्न हो, उनमें जिनका मन घुसकर परिवर्तित न होता वही धीर कहलाता है।”

राजभोगों में मुक्ति कैसी?

महर्षि शुक वेदव्यास के पुत्र हैं। वे अपने पिता के पास ही वेदाध्ययन करते हैं। उनके पिता उन्हें विवाह कर लेने कहते हैं तो वे इनकार कर देते हैं। वे सदा किसी विषय के विचार में उदासीन रहते हैं। उनकी हालत देखकर वेदव्यास उनसे बताते हैं कि यदि तुझे चैन नहीं मिलता तो मिथिला के राजा जनक के पास जाकर उनसे शांति पाने का राज जानकर आओ, क्योंकि वे राजर्षि, जीवन्मुक्त तथा महान योगी हैं। इतना ही नहीं महान ज्ञानी भी है। शुक अपने पिता की बातें सुनकर

आश्चर्यचकित होते हैं। वे सोचने लगते हैं कि सांसारिक बंधनों से राजभोगों को भोगनेवाला विरागी कैसे बन सकता है? इसे जानने के उद्देश्य से महर्षि शुक मिथिला नगर की ओर प्रस्थान होते हैं। नगर के मुख द्वार पर पहुँचते ही द्वार पालक उनको अंदर जाने से रोक देते हैं। परन्तु शुक किसी विकार दिखाने के बिना द्वार के निकट ही बैठ जाते हैं। कुछ देर बाद उन्हें महान योगी समझकर द्वारपाल उन्हें अंदर भेज देते हैं। शुक के आगमन का समाचार जानकर राजा जनक के मंत्री उनका स्वागत सत्कार कर के उनको उद्यानवन में ठहरने की व्यवस्था करते हैं, साथ ही उनकी सेवा शुश्रूषा के लिए अनेक सुन्दर युवतियों को नियुक्त भी करते हैं। लेकिन शुक किसी भी लालच में पडने के बिना दैव - चिंतन में लगे रहते हैं।

मन ही सब के लिए कारणभूत है

इसके पश्चात् राजा जनक सपरिवार शुक का उचित रीति से सत्कार करके उनके आगमन का कारण माँगते हैं। इस पर शुक विनम्रता से बोलते हैं वि हे राजन् मेरे पिता ने मुझे विद्याध्ययन के उपरांत विवाह कर लेने का आदेश दिया तो मैं ने उसे तिरस्कार कर दिया। मेरे पिता ने अनेक शंकाओं से भरे मुझे उनके निवारणार्थ आप के यहाँ भेजा। मैं अपने पिता के आदेश से मोक्षार्थी होकर यहाँ आया हूँ। आप मुझे अपना कर्तव्य समझाइये। राजा जनक शुक को उपदेश देते हैं कि हे महर्षि! कोई भी आश्रम धर्म का पालन करते हुए भी धीरे धीरे मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं। जिनके मन में अधिकतर वैराग्य भावना होती है, वे आश्रम जीवन के बिना भी सन्यास ग्रहण कर सकते हैं न?

फिर से शुक के संदेह निवृत्त करते हुए राजा जनक बताते हैं -
 “इन्द्रियाँ शक्तिशाली हैं। इनके अधीन होकर विभिन्न लालसाओं से भरपूर होकर सन्यास ग्रहण करने पर कोई प्रयोजन नहीं। गृहस्थाश्रम स्वीकार कर मन को अपने अधीन में रखकर समभाव से व्यवहार करने से भी मोक्षप्राप्त कर सकते हैं। और सुख - दुःखों से परे जीवन्मुक्त स्थिति में रह सकते हैं। मन ही बंध - मोक्षादि का हेतु है। उसे अपने अधीन में रखने पर ही कोई भी आत्म-ज्ञानी बन सकता है।

ममत्व एवं अहंकार न होना चाहिए

राजा जनक के उपदेश से शुक संतुष्ट नहीं होते। वे अपना संदेह प्रकट करते हैं कि क्या कोई भी ज्ञान से जीवन्मुक्त बन सकता है? राज्य का पालन करते रागद्वेषों के परे जीवन यापन करना कहाँ तक संभव है? शुक के संदेह को निवृत्त करते हुए जनक बताते हैं - हे ऋषिवर! आप सब को त्याग कर जंगल में चले जाने पर भी वहाँ के जंतुजाल से आपका निकटतम संबंध अवश्य रहता है। निकटवर्ती जीवों की चिंता होती है। आप को ऐसे विचार से बाधा पहुँचती है कि मैं किसी विचार के बिना प्रसन्नता से रहता हूँ। मैं पाबंद हूँ। मन में मैं और मेरा ऐसे भावों को न रखकर जीवन बिताना ही वास्तविक मुक्तक का लक्षण है, ऐसे होने से हम जहाँ भी रहें हमें मोक्ष प्राप्त होता है।”

राजा जनक के उपदेश से शुक को ज्ञानोदय होता है। वे जनक से विदा लेकर वहाँ से चले जाते हैं। इस तरह महर्षि शुक जैसे महान व्यक्तियों को भी मुक्तिमार्ग सिखानेवाले महान ज्ञानी हैं राजा जनक।

वह कसाई का लक्षण है?

महर्षि एकपाद के पुत्र का नाम अष्टावक्र है। एकपाद एक दिन धनार्जन के लिए राजा जनक की सभा में आता है। वह राजा जनक की सभा में 'वंदि' नाम के विद्वान के साथ किसी विषय पर बहस करके हार जाता है। इसके लिए उसे पानी में डूबते रहने की सजा मिलती है। अष्टावक्र अपनी माता से पिता का समाचार जानकर उसे छुड़ाने राजा जनक के यहाँ रवाना होते हैं। अष्टावक्र के नाम में ही है उसके शकल की वक्रता। उसके आकार को देखकर नगर के द्वार पर ही द्वारपाल उसे रोक देते हैं। वह अतिकष्ट साध्य से जनक की सभा में प्रवेश पा सकता है। सभा में उपस्थित एक आध सदस्य के बिना सब के सब उसके शरीराकृति देखकर व्यंग्य करते हैं। अष्टावक्र राजा जनक से अपना परिचय करा लेने के बाद बोलते हैं कि हे राजन्! मैं ने सुना कि आप की सारी सभा ज्ञान संपन्न व्यक्तियों से भरपूर रहती हैं। लेकिन प्रत्यक्ष रूप से देखने पर ज्ञात होता है कि यहाँ के सब के सब कसाई हैं। सभी सभा - सदस्य उसकी बातें सुन कर अचंभे में पड जाते हैं। अष्टावक्र फिर से बोलते हैं कि यहाँ के लोग मेरी आत्मा को नहीं देख सके। उनकी सारी दृष्टि केवल मेरे शरीर के चमडे एवं रक्त मांस पर ही केन्द्रित है। ऐसी दृष्टि कसाई के बिना ज्ञान संपन्न व्यक्तियों की नहीं होती। राजा जनक अष्टावक्र की ज्ञानशीलता समझ कर उसका उचित रीति से आदर सत्कार करते हैं। अष्टावक्र विद्वान वंदि को वाद - विवाद में हराकर अपने पिता सहित सजा भोगनेवालों का उद्धार करते हैं।

आचरण ही प्रधान है

राजा जनक अष्टावक्र से प्रश्न करते हैं कि क्या तुम पल भर में अपरोक्षानुभूति सिद्ध कर सकते हो? इस पर अष्टावक्र जवाब देते हैं कि यदि तुम मुझे गुरु मानते हो, तो मैं सृजन कर सकता हूँ। अपरोक्षानुभूति माने इन्द्रिय विषय गोचर के ज्ञान की अनुभूति प्राप्त करना। ज्ञान और अनुभूति अलग अलग हैं। ज्ञान की प्राप्ति सरल है तो अनुभूति की प्राप्ति कठिन है। आत्मज्ञान को आचरण में लानेवाला वेदांती कहलाता है। एक बार एक व्यक्ति किसी के घर जाकर पानी मांगता है। पानी पीकर बर्तन लौटा देने के बिना चला जाता है। घरवाले के मांगने पर वह बर्तन क्या? मैं कौन हूँ? आप कौन है इत्यादि प्रश्नों से भाषण प्रारंभ करता है। इसलिए व्यंग्यपूर्वक कहा गया कि वेदांति आ रहे हैं, अपने अपने बर्तनों सावधानी से रखिए। राजा जनक ऐसे दार्शनिक नहीं है। इसलिए वे अष्टावक्र के बडप्पन का स्वीकार कर लेते हैं।

अष्टावक्र राजा जनक से बताते हैं कि हे राजन्! आप को पहले पहल मैं जो चाहता हूँ उसे गुरु दक्षिणा के रूप में देना होगा। राजा उसे स्वीकार कर लेते हैं। अष्टावक्र राजा जनक के मन चाहने से जनक उसे तुरन्त अर्पण कर देते हैं। राजा जनक को अपना मन त्याग करने से अपरोक्षानुभूति होती है। समस्त सांसारिक बंधनों के लिए मन ही प्रधान है। ऐसे मन को त्याग कर राजा जनक बाल-ज्ञानी अष्टावक्र को अपने दरबार में स्थगित कर लेते हैं। देखिये जनक की ज्ञान पिपासा कितना महान है।

याज्ञवल्क्य का आशीस्

याज्ञवल्क्य वैशंपायन का शिष्य हैं। राजा जनक की चाह पर वैशंपायन हरदिन अपने शिष्यों में से एक एक शिष्य को जनक के पास अतिथि के रूप में भेजते रहे। एकदिन याज्ञवल्क्य को अतिथि बनाकर भेजते हैं। उनको सेवक के द्वारा समाचार मिलता है कि राजा अनुपस्थित है और किसी कारणवश रानी आने में असमर्थ है। इस पर याज्ञवल्क्य अपने हाथ के अक्षत राजा के सिंहासन पर और घुडसाल में छिडा कर चले जाते हैं। ये अक्षत दिव्य कांति से उज्वलित होते हुए वंश का सारा प्रदेश किसलयों तथा फूलों से प्रकाशमान होता है। राजा जनक इन सब को देख आश्चर्य चकित होते हैं। नौकर के द्वारा सारा वृत्तांत उनको मालूम होता है। वे यथाशीघ्र याज्ञवल्क्य का दर्शन कर अपनी अनुपस्थिति पर क्षमा की याचना करके विनम्रता से बहुत से विषय जानकर आनंद विभोर हो जाते हैं।

एक बार राजा जनक याग करने की इच्छा से ऋषियों का स्वागत करते हैं। उनमें श्रेष्ठ व्यक्तियों का सम्मान करने का विचार करते हैं। वे यज्ञ प्रदेश में अपार धन राशि रखकर बताते हैं कि हे मुनिवर! आप में जो श्रेष्ठ समझते हैं, वे इस धन राशि को ले सकते हैं। मुनि याज्ञवल्क्य अपने को श्रेष्ठ मान कर उस धन राशि को लेकर उसे अपने शिष्यों को देते हैं। वहाँ उपस्थित सब मुनिगण एकत्रित होकर याज्ञवल्क्य से बहस कर हार जाते हैं, आखिर मुनि शाकल्य भी हार मान लेते हैं। ऐसे श्रेष्ठ याज्ञवल्क्य राजा जनक के दरबार में वेदांतादि चर्चाएँ चलाते रहे।

बुद्धिमान इन गायों को हाँक सकते

किसी समय राजा जनक एक महान यज्ञ करने का संकल्प करते हैं। इस अवसर पर वे दान - धर्म भी करते हैं, याग में अति मुख्य आध्यात्मिक समस्याओं पर विचार करना चाहते हैं। जो बहस में प्रतिभा दिखाते हैं, उनको भेंट के रूप में शत धेनुओं के सीगों को सोने के सिक्के से अलंकृत कर घोषणा करते हैं कि जो यहाँ की चर्चा में अपनी प्रतिभा दिखाते हैं, वे इन गायों को उपहार के रूप में पाकर उनको हाँक ले जा सकते हैं, गायों पर शौक होने पर भी वहाँ उपस्थित सब के सब अपने अपने मुँह ताक लेते हैं। जब याज्ञवल्क्य अपने शिष्यों से गायों को हाँक लेने की आज्ञा देते हैं तब जनक का पुरोहित आश्वल अपने प्रश्नों के जवाब देने उनको रोकते हैं। याज्ञवल्क्य जनक के गुरु के सभी सवालों का समुचित रीति से जवाब देते हैं। अंत में गार्गी नाम की ब्रह्मवादिनी भी वाद - विवाद करती है तो छोटी उम्रवाले उनकी प्रतिभा देख सब आश्चर्य चकित होते हैं। उनके प्रश्नों का भी याज्ञवल्क्य ठीक ढंग से जवाब देते हैं। आखिर जनक की सभा में उपस्थित महान लोग मुक्त कंठ से घोषणा देते हैं कि आध्यात्मिक एवं वैज्ञानिक विषयों के लिए याज्ञवाल्क्य ही भोग्य परम पुरुष हैं। ऐसे महनीय का शिष्य होना राजा जनक का महाभाग्य है।

क्या गायों के लिए आये?

एकदिन राजा जनक के दरबार में मुनि याज्ञवाल्क्य वहाँ पहुँचते हैं। राजा जनक उनका उचित रीति से स्वागत सत्कार करके पूछते हैं कि आप गायों को ले जाने आये हैं या तत्व विचार के लिए। महर्षि जवाब देते हैं कि मैं दोनों के लिए आया हूँ। दोनों चर्चा की शुरुवात करते हैं।

याज्ञवल्क्य जनक से पूछते हैं कि तुम ने अब तक जितना जान लिया उसको प्रस्तुत करो। राजा जनक बताते हैं कि आप की राय में मुनि शैलिनी का वाक् ही ब्रह्मवाक् है। याज्ञवल्क्य उसे अधूरा समझकर उसका पूरा विवरण देते हैं। जब राजा जनक प्रसन्नता से महर्षि को हजार गायें और एक सांड भेंट के रूप में प्रदान करने तैयार होते हैं तो महर्षि उनको अस्वीकार करते हुए बताते हैं कि उपदेश पूरे होने के बिना मैं उपहार स्वीकार नहीं करता। यह मेरे पिता की आज्ञा है, इसके पश्चात् महर्षि राजा जनक को प्राण, नयन, क्षेत्र, मन, हृदयादि ब्रह्मतत्व का सविस्तार से उपदेश देते हैं। जनक उनसे प्रश्न करते हैं कि मैं शरीर छोड़ने पर कहाँ जाऊँ? इसका उत्तर देते हुए महर्षि कहते हैं कि तुम अपने आत्मा में ही अंतर निविष्ट हो जाते हो, राजा जनक को परिपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है। वे अपना राज्य अपने गुरु के चरणों पर समर्पित कर देते हैं। इस तरह राजा जनक ज्ञान सिद्धि पाकर प्रसिद्धि पाते हैं।

कर्मों के करने से वैराग्य कैसे मिलता

भगवान कृष्ण ने गीता में बताया कि जनकादि राजा निष्काम रूप से अपना कर्तव्य निभाते हुए मोक्ष प्राप्त कर सके। भगवान कृष्ण ने ही लोक संग्रह कर्माचरण के लिए उदाहरण के रूप में राजा जनक की प्रस्तावना करना जनक के वैशिष्ट्य को बताता है। गीता की महिमा में भी उल्लेख किया गया कि जनकादि राजा गीतोपदेश से ज्ञान वैराग्य की लब्धि पाकर पाप - पंक से बाहर निकल सके। गीता संदेश का अपने वास्तविक जीवन में अनुष्ठान करनेवाले महान व्यक्ति राजा जनक ही हैं। ये अंत में ऊर्ध्व लोक पहुँचते नरक का भी अनुभव करते हैं। यमधर्मराज

राजा जनक को नरक दिखाने उपरांत ही स्वर्ग पहुंचने की अनुमति देते हैं। राजा जनक नरक में पीडित लोगों को देख उनसे बताते हैं कि यहाँ इतने लोग पीडित होते रहने पर मुझे स्वर्ग जाने की इच्छा नहीं है और मोक्ष का भी। मैं यही पर रहूँगा। मैं अपना तपोबल दान देकर इन सब का उद्धार करूँगा।

श्रीरामकृष्ण परमहंस ने राजा जनक के बारे में बताया कि गुरुनानक से लेकर गुरुगोविंद तक के सभी सिख गुरु राजा जनक के अवतार ही हैं। राजा जनक लोगों की सेवा एवं भलाई करने के उद्देश्य से सिखधर्म दस गुरुजनों के रूप में अवतरित हुए। आखिर मोक्ष प्राप्त कर सके। अपरोक्षानुभूति संपन्न परमहंस की वाणी असत्य नहीं, बिल्कुल सत्य ही है, इसलिए राजर्षि, मुक्त संग तथा जीवन्मुक्त राजा जनक का जीवन मानव समाज के लिए सदा आदर्श रहा।

* * *